ॐनमःसिद्धेभ्यः।

देव, शास्त्र गुरुपूजा

संस्कृतप्राकृत

भाषाअर्थ सहित

ॐ जय जय जय। नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु

अर्थ–हे जिनेन्द्र आप जयवंत रहो जयवंत रहो जयवंत रहो॥ आपको हमारा नमस्कार हो नमस्कार हो नमस्कार हो॥

णमोअरिहंताणं। णमोसिद्धाणं। णमोआयरियाणं। णमो उवज्झायाणं। णमोलोएसव्वसाहूणं॥

ॐ अनादिमूलमन्त्रेभ्योनमः

(यह कहकरपुष्पक्षेपणकरें)

अर्थ–अरहंतों को नमस्कार हो। सिद्धों को नमस्कार हो। आचार्योंको नमस्कार हो। उपाध्यायों को नमस्कार हो। सर्वसाधुओंको नमस्कार हो॥

चत्तारिमंगलं। अरहंतमंगलं। सिद्धमंगलं। साहूमंगलं। केवलिपण्णत्तोधम्मोमंगलं।

अर्थ–लोकमें चार मंगल हैं (पापका नाश करने वाले अथवा आत्मीक सुखके देनेवाले को मंगल कहते हैं) (१) अरहंत (२) सिद्ध (३) साधु (४) केवलीप्रणीत धर्म॥

चत्तारिलोगोत्तमा। अरहंतलोगोत्तमा। सिद्धलोगोत्तमा। साहूलोगोत्तमा। केवलिपण्णत्तोधम्मोलोगोत्तमा॥

अर्थ–यह चारही लोकमें उत्तम पदार्थ हैं (१) अरहंत (२) सिद्ध (३) साधु (४) केवलीप्रणीतधर्म॥

चत्तारिसरणंपव्वज्जामि। अरहंतसरणंपव्वज्जामि। सिद्ध-

सरणंपव्बज्जामि। साहूसरणं पव्बज्जामि। केवलिपणत्तोधम्मोसरणं पव्बज्जामि॥

ओं नमोऽर्हत्स्वाहा।

(यह कहकर पुष्पक्षेपणकर)

अर्थ—येहीचारशरणहैं इनको मैं प्राप्त होताहूं (१) अरहंत (२)सिद्ध (३) साधु (४) केवलीप्रणीत धर्म॥

अपवित्रः पवित्रोवा सुस्थितोदुःस्थितोपिवा।
ध्यायेत्पंचनमस्कारंसर्व्वपापैः प्रमुच्यते॥

अर्थ—पवित्र हो अथवा अपवित्रहो सुखरूपहो वा दुःखरूपहो जो कोई पंच नमस्कार पदको ध्याता है उसके सव पाप छूटते हैं॥

अपवित्रः पवित्रोवा सर्वावस्थांगतोपिवा।
यःस्मरेत्परमात्मानं सवाह्याभ्यन्तरेशुचिः॥

अर्थ—शरीर पवित्रहो वा अपवित्रहो किसी भी अवस्था में हो जो कोई परमात्माका ध्यान करता है वह वाह्य और अभ्यन्तर सर्वप्रकार से पवित्र ही है॥

अपराजितमंत्रोयं सर्वविघ्नविनाशनः।
मंगलेषुचसर्व्वेषु प्रथमं मंगलंमतः॥

अर्थ—यह नमस्कार मंत्र ऐसा मंत्रहै कि किसी मंत्र आदिक से नहीं जीता जासक्ता है और यह मंत्र सर्वप्रकार के विघ्नका नाशकरने वाला है॥ सर्वमंगलकार्यों में यह मन्त्र सबसे उत्कृष्ट मंगल है॥

एसोपंचणमोयारो सव्बपापपणासणो।
मंगलाणंचसव्बेसिं पढमंहोइ मंगलम्॥

अर्थ—ऐसा जो यह पंचनमस्कार मंत्रहै वह सर्वपापों का नाश करने वाला है मंगलकार्यों में और सर्व कार्यों में जिसके पढ़नेमात्र से मंगल होता है॥

अर्हमित्यक्षरंब्रह्म बाचकंपरमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्यसद्बीजं सर्वतःप्रणमाम्यहम्॥

अर्थ—अर्ह यह अक्षर परब्रह्मका वाचक है सिद्ध चक्रका बीज है और सबसे उत्तम है मैं नमस्कार करता हूं॥

कर्म्माष्टकाविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रंनमाम्यहम् ॥

अर्थ–मैं ऐसे सिद्धचक्र अर्थात् सिद्धोंके समूह को नमस्कार करता हूं जो आठ कर्मों से रहित हैं और मोक्ष लक्ष्मी के स्थान हैं और सम्यक्त्व आदि गुण सहित हैं ॥

विघ्नौघाःप्रलयंयांति शाकिनीभूतपन्नगाः ।
बिषंनिर्बिषतांयांति स्तूयमानेजिनेश्वरे ॥

(यह पढकर पुष्प क्षेपण करै)

अर्थ–हे जिनेश्वर तेरे गुणानुवाद गानेसे सर्वविघ्नोंका समूह और शाकिनी और भूत और पन्नग सब नाश होजाते हैं और विष अर्थात् जहरभी निर्विष होजाताहै इसके पश्चात् सहस्रनाम पढ़कर दस १० अर्घ चढ़ावै नहीं तो एकअर्घ यह पढ़कर चढ़ावै ॥

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाम महंयजे ॥
ॐ ह्रीं भगवाज्जिनसहस्रनामभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीतिस्वाहा ॥

श्रीमज्जिनेंद्रमभिवंद्यजगत्रयेशं ।
स्याद्वादनायकमनंतचतुष्टयार्हम् ॥
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतु ।
जैनेंद्रयज्ञाबिधिरेपमयाभ्यधायि ॥

अर्थ–मैं तीनजगत् के स्वामी और स्याद्वाद विद्याके नायक और अनन्तज्ञान अनन्तदर्शन अनन्तसुख अनन्तवीर्य युक्त समवसरणादि लक्ष्मी और अनन्त गुणरूप आत्मीकलक्ष्मी के धारक ऐसे जिनेंद्रदेव को नमस्कारकरके जिनेंद्रयज्ञ अर्थात् भगवान् का पूजन करताहूं ॥ यह पूजन श्रीमूलसंघ के सम्यक्दृष्टिजन को पुण्यमाप्तिका अद्वितीय कारण है ॥

स्वस्तित्रिलोकगुरवे जिनपुंगवाय ।
स्वस्तिस्वभावमहिमोदयसुस्थिताय ॥
स्वस्तिप्रकाशसहजोर्जितदृङ्मयाय ।

स्वस्तिप्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥

अर्थ-तीनलोक के गुरु श्रीजिनेंद्र के अर्थ कल्याण होवै ॥ जो आत्मीकस्वभाव की महिमा के उदय में अर्थात् केवल ज्ञानके प्रकाश में सुखरूप स्थित है ऐसे श्रीभगवान्के अर्थ कल्याण होवै ॥ स्वभावहीसे महान् केवल दर्शनरूप प्रकाशवान् श्रीजिनेंद्र के अर्थ कल्याण होवे ॥ उज्ज्वल और ललित अद्भुत विभवके धारक जिनेंद्रके अर्थ कल्याण होवे ॥

स्वस्त्युच्छलद्विमलवोधसुधाप्लवाय ।
स्वस्तिस्वभावपरभावविभासकाय ॥
स्वस्तित्रिलोकवितलैकचिदुद्गमाय ।
स्वस्तित्रिकालसकलायतविस्तृताय ॥

अर्थ-उत्पन्न हुवाहै केवल ज्ञानरूप अमृतका प्रवाह जिसमें ऐसे जिनेंद्रके अर्थ कल्याण होवे ॥ स्वभाव परभाव के प्रकाशक जिनेंद्रके अर्थ कल्याण होवे त्रिलोक में विस्तराहै चैतन्यका उदय जिसका ऐसे जिनेंद्र के अर्थ कल्याण होवे॥ तीनकाल सम्बन्धी समस्त पदार्थों के ज्ञान के विस्तारको प्राप्त भये ऐसे जिनेंद्रके अर्थ कल्याण होवे ॥

द्रव्यस्यशुद्धिमधिगम्ययथानुरूपं ।
भावस्यशुद्धिमाधिकामधिगंतुकामः ॥
आलंबनानिबिबिधान्यवलंब्यबल्गान् ।
भूतार्थ यज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥

अर्थ-देशकालकी योग्यताके अनुकूल जलचंदनादिक द्रव्यनकी शुद्धता को ग्रहणकरके और भावों की अधिक शुद्धता से वीतरागता के प्राप्त होनेका इच्छुक मैं जिनेंद्रके गुणों का स्तवन, ध्यान और प्रतिबिंवका अवलोकन आदिसे नाना प्रकारके अवलम्बन ग्रहण करके सत्यार्थयज्ञ अर्थात् पूज्यपुरुष का पूजन करूं हूं ॥

अर्हन्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि ।
बस्तून्यनूनमखिलान्ययमेकएव ॥
अस्मिन्ज्वलद्विमलकेवलवोधबह्नौ ।
पुण्यं समग्रमहमेकमनाजुहोमि ॥

अर्थ- हे अरहंत पुराणपुरुषों में उत्तम मैं पूजन करनेवाला समस्त पवित्र वस्तुओंको निश्चय करके इस देदीप्यमान् निर्मल केवल ज्ञानरूप अग्नि में एकाग्र मनहुवा इसप्रकार हवन करूं हूं जिससे समस्त पुण्य की ही प्राप्तिहो ॥

(यह पढकर पुष्पक्षेपण करै)

श्रीवृषभःस्वस्ति । स्वस्ति श्रीअजितः । श्रीसंभवःस्वस्ति । स्वस्ति श्री अभिनंदनः । श्रीसुमतिः स्वस्ति । स्वस्ति श्री पद्मप्रभः । श्री सुपार्श्वः स्वस्ति । स्वस्ति श्रीचंद्रप्रभः । श्रीपुष्पदंतः स्वस्ति।स्वस्ति श्रीशीतलः। श्रीश्रेयांसस्वस्ति।स्वस्तिवासुपूज्यः॥ श्रीबिमलः स्वस्ति।स्वस्ति श्रीअनन्तः।श्रीधर्मः स्वस्ति। स्वस्ति श्रीशांतिः । श्रीकुंथु स्वस्ति। स्वस्ति श्रीअरनाथः।श्रीमल्लः स्वस्ति । स्वस्तिमुनिसुव्रतः। श्रीनमिः स्वस्ति । स्वस्ति श्रीनेमिनाथः । श्रीपार्श्वः स्वस्ति । स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः ॥

(यह पढकर पुष्पक्षेपण करै)

अर्थ–श्रीवर्तमान चौवीस तीर्थंकरके अर्थ कल्याण हो ॥ तिनके नाम यह है (१)श्रीऋषभनाथ(२) श्री अजितनाथ (३) श्रीसंभननाथ (४) श्रीअभिनंदननाथ (५) श्रीसुमतिनाथ (६) श्रीपद्मप्रभु (७) श्रीसुपार्श्वनाथ (८) श्रीचंद्रप्रभु (९) श्रीपुष्पदंत (१०) श्रीशीतलनाथ (११)श्रीश्रेयांसनाथ (१२) श्रीवासपूज्य (१३) श्रीविमलनाथ (१४) श्रीअनंतनाथ (१५) श्रीधर्मनाथ (१६) श्रीशांतिनाथ (१७) श्रीकुंथनाथ (१८) श्रीअरहनाथ (१९) श्रीमाल्लिनाथ (२०) श्रीमुनि सुव्रतनाथ (२१) श्रीनमिनाथ(२१) श्रीनेमिनाथ, २१) श्रीपार्श्वनाथ (२४) श्रीमहावीर स्वामी ॥

(इसका प्रत्येक छन्द पढकर पुष्प क्षेपै)

नित्याप्रकंपाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनः पर्ययशुद्धबोधाः ।
दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्पयोनः ॥

अर्थ--वह परमऋषि हमारा कल्याण करो जो अविनाशी अचल अद्भुत केवलज्ञानके धारकहै वा देदीप्यमान मनःपर्यय शुद्धज्ञानके धारकहै वा दिव्यअवधि ज्ञान से प्रवुद्ध हैं (चौंसठ प्रकारकी ऋद्धियों मे से इसमें तीनप्रकार की ऋद्धि का वर्णन किया है॥ (१)केवलज्ञान(२)मनःपर्ययज्ञान(३)अवधिज्ञान)॥

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि ।
चतुर्विधंबुद्धिबलंदधानाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयोनः ॥

अर्थ—कोष्ठस्थधान्योपमऋद्धि । एकबीजऋद्धि ॥ संभिन्नसंश्रोतृऋद्धि ॥ पदानुसारिऋद्धि ॥ ऐसे चारप्रकार के बुद्धिबलको धारणकरनेवाले परमऋषि हमारा कल्याण करो ॥ भावार्थ ॥ जैसे कोठे में नानाप्रकारके अनाज और अन्यवस्तु रक्खी रहतीहैं और कुठारी जिस वस्तुकी जरूरत होती है अलग निकाल लेताहै इसही प्रकार जो कुछ पाठ पढ़ै वा सुनै वह सब भिन्न भिन्न उसही प्रकार याद रहै एकवार्ता का एक अक्षरभी दूसरी वार्तामें नमिलै इस को कोष्ठस्थधान्योपमऋद्धि कहते हैं । किसीग्रन्थ के एकबीजपदको ग्रहण करके समस्त ग्रंथ को जानना एकबीजऋद्धि है । बहुतसे मनुष्य और पशुओंका यहां तक कि चक्रवर्ती की समस्त सेना के मनुष्य पशुओं का भी शब्द एक ही कालमें भिन्न भिन्न श्रवण करने की शक्ति को संभिन्नसंश्रोतृऋद्धि कहते हैं । किसीग्रंथके आदि मध्य वा अन्त पदको ग्रहण करके समस्तग्रंथको जानना पदानुसारिणीऋद्धि है ॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनाघ्राणविलोकनानि ।
दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहन्तःस्वस्तिक्रियासुःपरमर्षयोनः ॥

अर्थ—परमऋषीश्वर दिव्यमति ज्ञानके बलसे सैकड़ों योजन दूररक्खी-हुई वस्तु को छूसक्तेहैं शब्द सुनसक्ते हैं चाख सक्तेहैं सूंघसक्ते हैं और देख सक्ते हैं ऐसी पंचप्रकारकी ऋद्धि के धारक हमारा कल्याण करो ॥

प्रज्ञाप्रधानाःश्रमणाःसमृद्धाः प्रत्येकबुद्ध्यादशसर्बपूर्बैः ।
प्रवादिनोष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्तिक्रियासुःपरमर्षयोनः॥

अर्थ—प्रज्ञाश्रमणऋद्धि के धारक और प्रत्येक बुद्धि ऋद्धि के-धारक और दश पूर्व और चौदह पूर्वकर संयुक्त और प्रवादऋद्धि के धारक और अष्टांग निमित्तके जाननेवाले ऐसे परम ऋषि हमारा कल्याण करो ॥ भावार्थ ॥ ऐसे सूक्ष्म विचारको जिसका उत्तर श्रुतकेवली के बिना दूसरा नहीं देसक्ताहै द्वादशांग के पढ़े विनाही बुद्धि की प्रबलशक्ति से जान लेना प्रज्ञाश्रमणऋद्धिहै ॥ बिना उपदेश के अपनीही बुद्धिकीशक्ति से ज्ञान में निपुण होना प्रत्येकबुद्धिऋद्धि है ॥ महारोहणी आदिक विद्या का वश में होना दशपूर्वऋद्धिहै ॥ द्वादशांगका ज्ञान होना चतुर्दशपूर्व

ऋद्धि है ॥ दूसरे को वाद में जीतलेना वाद ऋद्धि है ॥ आठ प्रकारके निमित्त ज्ञानको जानना अष्टांगनिमित्तऋद्धि है इसप्रकार चार श्लोक में बुद्धि आदि के १८ भेद कहे ॥

अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्त्या कृतिनो गरिम्णि ।
मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥

अर्थ—अणिमाऋद्धि और महिमाऋद्धि और लघिमाऋद्धि और गरिमाऋद्धि में समर्थ और मन वचन काय यह तीन बलऋद्धि के धारक ऐसे परमऋषि हमारा कल्याण करो ॥ भावार्थ ॥ सूक्ष्म शरीर करलेनेकी शक्ति अणिमाऋद्धि है॥शरीर को बड़ा स्थूल करलेने की शक्ति महिमाऋद्धि है ॥ हलका शरीर करना लघिमाऋद्धि है ॥ भारी शरीर करना गरिमा ऋद्धि है ॥ अंतर्मुहूर्त में समस्त श्रुतज्ञानका विचार करलेना मनबलऋद्धि है ॥ अंतर्मुहूर्त मे समस्त श्रुतज्ञानका उच्चारण करना वचनबलऋद्धि है ॥ चार महीने वा छै महीने वा एक वर्ष पर्यंत आहारपानरहित ध्यानारूढ़ तिष्ठना और शरीर का तेज बना रहना कायबलऋद्धि है ॥

सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं प्राकाम्यमंतर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः ।
तथाप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥

अर्थ—(१) कामरूपित्व (२)वशित्व(३)ऐश्य(४)प्राकाम्य(५)अंतर्द्धि(६) आप्ति (७) अप्रतीघात ॥ ऐसी ऋद्धियों के धारक महाऋषि हमारा कल्याण करो ॥ भावार्थ ॥ अनेकरूप विक्रिया करनेकी शक्ति कामरूपित्वऋद्धि है॥ समस्त जीवोंको वश करने की सामर्थ वशित्वऋद्धि है ॥ त्रैलोक्यकी प्रभुता धारण करने की सामर्थ ऐश्वर्यऋद्धि है ॥ जलमें भूमिवत् गमन करना भूमिमें जलवत् उन्मज्जन निमज्जन करना प्राकाम्यऋद्धि है ॥ अदृश्य होजाने की शक्ति अन्तर्द्धऋद्धि है ।भूमिपर तिष्ठते अंगुली पसारकर सूर्य्य चंद्रमा आदिक का स्पर्शन करना आप्तिऋद्धि है ॥ गमन करते समय पर्वत वा वज्र आदिक से भी न रुकना अप्रतीघातऋद्धि है ॥

जंघावलिश्रेणिफलांबुतंतु प्रसूनबीजांकुरचारणाह्वाः ।
नभोंगणस्वैरविहारिणश्च स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥

अर्थ—भूमितें चारअंगुल ऊपर आकाशमें जंघाको हिलाकर शीघ्र गमन करना जंघाचारणऋद्धि है ॥ और आकाश में गमन करते हुवे फल फूल तंतु आदिकपर इस प्रकार गमन करना जिससे किसी को कुछ बाधा

न हो चारणऋद्धि है॥ और पर्यकासन तिष्ठते वा कायोत्सर्ग धारे चरणों के उठाये विना आकाश में गमन करना आकाशगामीऋद्धि है ॥ ऐसी ऋद्धि के धारक परमऋषि हमारा कल्याण करो ॥

दीप्तंचतप्तंचतथामहोग्रं घोरंतपोघोरपराक्रमस्थाः ।
ब्रह्मापरंघोरगुणाश्चरन्तःस्वस्तिक्रियासुःपरमर्षयोनः ॥

अर्थ--दीप्ततपऋद्धि, तप्ततपऋद्धि, महातपऋद्धि, उग्रतपऋद्धि, घोरतप ऋद्धि, घोरपराक्रमऋद्धि, घोरब्रह्मचर्यऋद्धि ॥ इस प्रकार सप्ततपऋद्धि के धारक परमऋषि हमारा कल्याण करो॥ भावार्थ ॥ उपवास वा अनशन वहुत दिनतक होनेपर भी मन वचन कायका वल वढ़ताजावे शरीर की दीप्ति प्रकट होती जाय यह दीप्तितपऋद्धि है ॥ जो वस्तु खाईजावे वा पी जावै उसका मल मूत्र रुधिर मांस कुछ भी न वनै वह इस प्रकार सूखजावे जैसे आगमें पडीहुई पानीकी एकवूंद सूखजातीहै यह तप्ततपऋद्धि है ॥ महा उपवासादिक का करना महातपऋद्धिहै ॥ एक दिन वा दोदिन वा पक्ष मास आदिकका उपवास आरम्भ करलिया हो मरणपर्यंत उससे नहीं हटना उग्रतप ऋद्धिहै॥ रोगी होकर भी अनशन आदिक कोनहीं छोड़ना और जहां सिंह व्याघ्र आदिक दुष्टजीव विचरें तहां निवास करना घोरतपऋद्धि है॥ अनेक रोगादिक होते हुए भी एकांत भयानक स्थानमे नित्य तपकी वृद्धि करना घोरपराक्रमऋद्धि है॥ ऐसे ब्रह्मचर्य को ग्रहण करना कि स्वप्न में भी चलायमान नहो घोर ब्रह्मचर्यऋद्धि है ॥

आमर्शसर्व्वौषधयस्तथाशी विषं विषादृष्टिविषंविषाश्च ।
सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयोनः ॥

अर्थ--जिनका हस्तपादादिक अंगका स्पर्शही समस्त असाध्य रोग को दूर करदे वह आमर्शौषधिऋद्धि के धारक हैं॥ जिनके अंग प्रत्यंग को स्पर्श करके जो पवन आवै वह पवनही समस्त रोगों को नष्ट करदे वह सर्वौषधिऋद्धि के धारक हैं॥ विष सहित भोजनभी जिनके मुख में पहुँचकर विष रहित होजाय वा जिनके वचन सुननेवाले का विष दूर होजाय वह आशीविषऋद्धिके धारक हैं॥ जिनके देखने ही से विष दूर होजाय वह दृष्टि विषऋद्धि के धारक हैं॥ जिनके निष्ठीवन अर्थात् कफ आदिक को स्पर्श करके जो पवन आवै वह पवनही सर्व रोग दूरकरदे वह खिल्लौषधिऋद्धि

के धारक हैं ॥ जिनके मल को स्पर्श करके जो पवन आवै उस पवनसे ही सर्वरोग दूर होजावें वे विटौषधिऋद्धि के धारक है ॥ जिनके पसेव को स्पर्श करके जो पवन आवै उस से सर्वरोग दूर होजावैं वे जलौषधिऋद्धि के धारक है ॥ जिनके कर्ण दंत आदिक के मैलको स्पर्श करके जो पवन आवै उससे सर्वरोग दूरहोजायँ वे मलौषधि ऋद्धिके धारकहै ॥ ऐसे आठ प्रकार औषधिऋद्धिके धारक परमऋषि हमारा कल्याण करो ॥

क्षीरंस्रवंतोत्रघृतं स्रवंतो मधुस्रवंतोप्यमृतंस्रवंतः ।
अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयोनः ॥

अर्थ—जिनके हाथ में प्राप्त हुआ भोजन क्षीररस होजाय वे क्षीरस्रावीऋद्धि के धारक है ॥ जिनके हाथमें भोजन घृतरस होजावै वह घृतास्रावीऋद्धिके धारक हैं ॥ जिनके हाथ में भोजन मधुरस होजावै वह मध्वास्रावी ऋद्धि के धारक हैं ॥ जिनके हाथमें भोजन अमृतरस होजावै वह अमृतास्रावीऋद्धि के धारक है ॥ महामुनि जिस स्थानमें वैठें उस स्थान में चक्रवर्ती का कटक समाजावै तौ भी स्थानकी कमी न हो वह अक्षीणसंवासऋद्धि के धारक हैं ॥ महामुनि जिस रसोई में भोजन करजावें उस रसोई में से चक्रवर्ती का कटक भोजन करजाय तौभी उस रसोई में कमी न पड़ै वह अक्षीणमहानस ऋद्धि के धारक हैं ॥ ऐसी अद्भुत ऋद्धियों के धारक परम ऋषि हमारा कल्याण करो ॥

देवशास्त्रगुरुपूजा ।

सार्वःसर्वज्ञनाथः सकलतनुभृतांपापसन्तापहर्ता,
त्रैलोक्याक्रांतकीर्तिःक्षतमदनरिपुर्घातिकर्मप्रणाशः ।
श्रीमान्निर्वाणसंपद्वरयुवतिकरालीढकंठः सुकंठै-
र्देवेंद्रैर्वंद्यपादोजयतिजिनपतिःप्राप्तकल्याणपूजः ॥

अर्थ—जो सर्व प्राणियों के हित रूपहै ॥ जो सर्व के जाननेवाले नाथ हैं ॥ और समस्त प्राणियो के पाप संताप के हरने वाले हैं ॥ समस्त त्रैलोक्यमें जिनका उज्ज्वलयश व्याप्तरहा है॥कामरूपी वैरी जिन्होंने नष्ट करदिये हैं ॥ चार घातिया कर्मोंका जिन्होंने नाश करदिया है ॥ जो अविनाशी लक्ष्मी संयुक्त हैं ॥ और निर्वाणकी लक्ष्मीरूप उत्तम स्त्री की वाहु से जिनका कण्ठ

आलिंगित है ॥ जिनके चरणों की वंदना सुन्दर कंठके धारक देवेंद्र करते हैं॥ पंचकल्याणक से जिनकी पूजा होती है॥ ऐसे जिनपति भगवान् जयवन्त हैं ॥

जयजयजयश्रीसत्कांतिप्रभोजगतांपते ।
जयजयभवानेवस्वामीभवांभासिमज्जतां ॥
जय जय महामोहध्वांतप्रभातकृतेर्चनं ।
जयजयजिनेशत्वंनाथ प्रसीद करोम्यहं ॥

(यह पढ़कर प्रतिमा को पुष्प क्षेपै)

अर्थ–हे ज्ञानलक्ष्मीयुक्त सम्यक्त कांति के प्रभु आप हमारे हृदयमें जय वंतेभवतो जयवंते भवतो जयवंते भवतो ॥ हे जगत् के पति आप जयवंत हो जयवंतहो जयवंतहो ॥ संसार समुद्र में डूबने प्राणियों के आपही स्वामी हो इस कारण जयवंत रहो जयवंत रहो ॥ हे जिनेश आप जयवंत रहो जयवंत रहो, मैं महामोहरूप अंधकार को दूर करनेवाला जो ज्ञानरूपी प्रभात है उसको करने के लिये आपका पूजन करूंहूं, आप हमारे ऊपर प्रसन्न होवैं ॥

देवीश्रीश्रुतदेवतेभगवतित्वत्पादपंकेरुह–
द्वंद्वेयामिशिलीमुखत्वमपरंभक्त्यामयाप्रार्थ्यते ॥
मातश्चेतसितिष्ठमेजिनमुखोद्भूतेसदात्राहिमां ।
दृग्दानेनमयिप्रसीदभवतिसंपूजयामोधुना ॥

(यह पढ़कर शास्त्रको पुष्प क्षेपै)

अर्थ–हे देवी हे श्रुतिदेवते हे भगवति अर्थात् हे जिनवाणी मैं तेरे चरण-कमल में भौंरे की नाई प्राप्त होताहूं॥ हे जिनेंद्रके मुखसैं उत्पन्नभई मैं भक्ति करकै प्रार्थना करताहूं तू प्रसन्न हो और मेरेचित्त में सदाकाल तिष्ठ और स-म्यग्दर्शन देकर संसारपतन से मेरी रक्षाकर अब मैं तेरी पूजा करताहूं ॥

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगंगुरोः ।
तपःप्राप्तप्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥

(यह पढ़कर गुरुको पुष्प क्षेपे)

अर्थ–जो तपके प्रभावकर प्रतिष्ठाको प्राप्त हुवे हैं, त्रिलोक में बड़ेहैं और महात्मा हैं ऐसे गुरुके चरणों का मैं पूजन करूं हूं ॥

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रवंद्यान् शुंभत्पदान्शोभितसारवर्णान् ।
दुग्धाब्धिसंस्पर्द्धिगुणैर्जलौघैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन्यजेहम् ॥

अर्थ-मैं श्रीजिनेंद्रदेव, जिनवाणी, और साधु का पूजन क्षीरसमुद्र के जलके समान उत्तम जलसे करताहूं जिनकीवंदना स्वर्गके इन्द्र धरणीन्द्र और नरेन्द्र सदा करते हैं और जो उत्कृष्ट पदके धारी हैं और जिनका वर्ण शोभायमान और सारहै ॥

१ ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने जन्मजरा मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

२ ओं ह्रीं जिनमुखोद्भवस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

३ ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रगुणराजमानाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपमीतिस्वाहा ॥

अर्थ-अनंतानंत ज्ञानशक्तिके धारक, अठारह दोष रहित, छियालीस गुण संयुक्त, परमब्रह्म अर्हंत परमेष्टीको, जिनेंद्र मुखसे उत्पन्न स्याद्वादनय करि गर्भित द्वादशांगरूपशास्त्रको तथा सम्यग्दर्शन सम्यक्ज्ञान सम्यग्चारित्र करि मंडित आचार्य, उपाध्याय, सर्व साधुको जल समर्पण करूंहूं ॥

ताम्यत्त्रिलोकोदरमध्यवर्त्तिसमस्तसत्वाहितहारिवाक्यान् ।
श्रीचन्दनैर्गंधविलुब्धभृंगैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन्यजेहम् ॥

अर्थ-त्रिलोकके उदरमें तिष्ठते समस्त जीव सन्तापको प्राप्त होरहे हैं ॥ श्रीजिनेंद्र और सिद्धान्तशास्त्र और यति के वाक्य उस सन्ताप को दूर करने वालेहैं उनको मैं सुन्दर सुगंध चन्दन से जिसकी सुगंध पर भौंरे लोभी हो रहे हैं पूजूं हूं ॥

ओं ह्रीं संसारतापरोगविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीतिस्वाहा ॥

अर्थ-संसारका आताप रोग दूर करने के अर्थ चन्दन समर्पण करूंहूं ॥

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन्सुभक्त्या ।
दीर्घाक्षतांगैर्धवलाक्षतौघैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेहम् ॥

अर्थ-श्रीजिनेंद्रदेव, सिद्धांतशास्त्र और साधुको जो अपारसंसाररूप महान्

समुद्र से पार उतारने को बड़ेजहाज के समान हैं मैं सच्ची भक्तिसे बड़े२ अखंडित और उज्ज्वल अक्षतों से पूजूं हूं ॥

ओं ह्रीं अक्षयपदप्रासाय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अर्थ-अविनाशी पदकी प्राप्ति के अर्थ अक्षत समर्पण करूं हूं ॥

विनीतभव्याब्जबिबोधसूर्यान् वर्यासुचर्यान्कथनैकधुर्यान्।

कुंदारविंदप्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन्यजेहम् ॥

अर्थ—विनयवान् भव्यजीवरूप कमल के प्रफुल्लित करने को सूर्य और सर्वोत्कृष्ट चारित्र का व्याख्यान करने में प्रधान ऐसे श्रीजिनेन्द्रदेव, सिद्धांत शास्त्र और साधुकी पूजा कुंद और कमल आदिक पुष्पनि से करूं हूं ॥

ओं ह्रीं कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अर्थ-कामरूपी बाण के विध्वंस करने के अर्थ पुष्प समर्पण करूं हूं ॥

कुदर्प्पकन्दर्प्पविसर्प्पसर्प्पप्रसह्यनिर्णाशनवैनतेयान् ।

प्राज्याज्यसारैश्चरुभीरसाढ्यैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेहम्॥

अर्थ-खोटा गर्व करनेवाले कामरूपी सर्प को नाश करने के लिये जो गरुड समान हैं ऐसे श्रीजिनेंद्र, सिद्धान्त और साधु की पूजा वहुत घृत और रस से भरेहुवे नैवेद्य से करूं हूं ॥

ओं ह्रीं क्षुदारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीतिस्वाहा ॥

अर्थ-भूखकी वेदना को नाश करने के अर्थ नैवेद्य समपर्ण करूं हूं ॥

ध्वस्तोद्यमांधीकृतविश्वविश्वमोहांधकारप्रतिघातदीपान् ।

दीपैःकनत्कांचनभाजनस्थैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेहम् ॥

अर्थ-विध्वन्स किया है आत्महित का उद्यम जिसने और अन्धे किये हैं समस्त जगत् के प्राणी जिसने ऐसे मोह अन्धकार के दूर करने को दीपक समान श्रीजिनेन्द्रदेव, सिद्धान्तशास्त्र और साधुकी पूजा स्वर्णपात्र में रक्खे हुवे दीपक से करूं हूं ॥

ओं ह्रीं मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अर्थ-मोह अंधकार के नाशके अर्थ दीपक समर्पण करूं हूं ॥

दुष्टाष्टकर्म्मेन्धनपुष्टज्वालासन्धूपनेभासुरधूमकेतून् ।

धूपैर्विधूतान्यसुगन्धगंधैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन्यजेहम् ॥

अर्थ-दुष्ट अष्टकर्मरूप ईधन के पुष्टसमूह के दग्ध करने को देदीप्यमान अग्निस्वरूप श्रीजिनेंन्द्रदेव, सिद्धान्तशास्त्र और साधु की पूजा ऐसी धूप से करूं हूं जो अन्य सुगन्ध द्रव्यों की गंध को तिरस्कार करने वाली है ॥

ओं ह्रीं अष्टकर्मदहनाय ॥ धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अर्थ-आठकर्मों के जलाने के अर्थ धूप समर्पण करूं हूं ॥

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसामगम्यान् कुवादिवादास्खलितप्रभावान् ।
फलैरलं मोक्षफलाभिसारैर्जिनेंद्रसिद्धान्तयतीन् यजेहम् ॥

अर्थ-श्रीजिनेंद्र देव, सिद्धांतशास्त्र और साधुकी जिनका पार क्षोभ और लोभके वशीभूत लोकके जन नहीं जानसक्ते हैं और जिनका प्रभाव कुवादियों के वाद से अरोक है उनकी पूजा सारभूत फल से करता हूं ॥

ओं ह्रीं मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अर्थ-मोक्षकी प्राप्तिके अर्थ फल समर्पण करूंहूं ॥

सद्वारिगंधाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः ।
फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोग्यान्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन्यजेहम् ॥

अर्थ-मैं उज्ज्वल जल गंध अक्षत पुष्प नैवेद्य दीप और निर्दोष धूपका धुवां और विचित्रफल से जो वहुत पुण्य के देनेवाले हैं श्रीजिनेंद्रदेव, सिद्धांत शास्त्र और साधुकी पूजा करताहूं ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं अनर्घपदप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अर्थ-अनर्घपदकी प्राप्ति के अर्थ अर्घ अर्पण करूं हूं ॥

येपूजांजिननाथशास्त्रयमिनांभक्त्यासदाकुर्वते ,
त्रैसन्ध्यंसुविचित्रकाव्यरचनामुच्चारयंतोनराः ।
पुण्याढ्यामुनिराजकीर्तिसहिताभूत्वातपोभूषणा-
स्तेभव्याःसकलावबोधरुचिरांसिद्धिंलभंतेपरां ॥

अर्थ-जो पुरुष नानाप्रकार सुन्दर काव्यरचनाको उच्चारण करके श्रीजिन-देव और शास्त्र और संयमी मुनिकी पूजा सदा तीनकाल भक्तिसहित करते हैं वे भव्यजीव महान् पुण्यके धारी होते हैं और तपरूप आभूषण के धारी होकर मुनीश्व की कीर्तिको पाकर केवल ज्ञान संयुक्त सुन्दर सर्वोत्कृष्ट सिद्धपदको प्राप्त होते हैं ॥

(यह कहकर पुष्पकी अजुली क्षेपै)

ऋषभोजिननामाच । सम्भवश्चाभिनंदनः ॥
सुमतिःपद्मभासश्च । सुपार्श्वोजिनसत्तमः ॥
चंद्राभः पुष्पदंतश्च ।शीतलो भगवान्मुनिः॥
श्रेयांश्चवासुपूज्यश्च । विमलोविमलद्युतिः ॥
अनंतोधर्मनामाच । शान्तिःकुंथुर्जिनोत्तमः ॥
अरश्चमल्लिनाथश्च । सुव्रतोनमितीर्थकृत् ॥
हरिबंशसमुद्भूतो । रिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ॥
ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः । पाश्वोनागेंद्रपूजितः ॥
कर्म्मांतकृत्महाबीरः । सिद्धार्थकुलसम्भवः ॥
एतेसुरासुरौघेण । पूजिताविमलात्विषः ॥
पूजिताभरताद्यैश्च । भूपेन्द्रैर्भूतिभूरिभिः ॥
चतुर्विधस्यसंघस्य । शान्तिकुर्वेतुशाश्वतीम्॥

अर्थ-(१) श्रीऋषभनाथ (२) अजितनाथ (३) सम्भवनाथ (४) अभिनंदनाथ (५) सुमतिनाथ (६) पद्मप्रभु (७) सुपार्श्वनाथ जिनोत्तम (८) चन्द्रप्रभु (९) पुष्पदन्त (१०) शीतलनाथ (११) श्रेयांसनाथ (१२) वासुपूज्य (१३) विमलनाथ निर्मलज्योति के धारक (१४) अनन्तनाथ (१५) धर्मनाथ (१६) शांतिनाथ (१७) कुंथनाथ जिनोत्तम (१८) अर नाथ (१९) मल्लिनाथ (२०) मुनिसुव्रतनाथ (२१) नामिनाथ तीर्थंकर (२२) अरिष्टनेमि जिनेश्वर जो हरिवंशमें उत्पन्न हुवे (२३) पार्श्वनाथ जिनपर कमठके उपसर्ग नहीं चलसके और धरनेंद्र से पूजित (२४) महावीर स्वामी कर्मों का नाश करनेवाले और जो सिद्धार्थ राजा के वंशमें उत्पन्न हुये ॥ यह चौबीस तीर्थंकर सुर असुर से पूजित निर्मल कांति के धारी हैं ॥ जो बहुत विभूति के धारी भरतादिक राजाओंसे पूजितहैं ॥ यह तीर्थंकर चार प्रकारके संघ को अविनाशी शान्ति दो ॥

जिनेभक्तिर्जिनेभक्तिर्जिनेभक्तिःसदास्तुमे ॥
सम्यक्त्वमेवसंसारवारणं मोक्षकारणम् ॥

(यहा पुष्पक्षेपण करना)

अर्थ-हमारी सदाकाल जिनेंद्र में भक्ति रहे ॥ जिनेंद्र में भक्ति रहे॥ जिनेंद्र में भक्ति रहे॥ क्योंकि यह भक्ति सम्यग्दर्शन की प्राप्ति करानी है और सम्यग्दर्शन संसार का नाश करने वाला और मोक्षका कारण है

श्रुतेभक्तिःश्रुतेभक्तिःश्रुतेभक्तिःसदास्तुमे ।
सद्ज्ञानमेवसंसारवारणं मोक्षकारणम् ॥

(यहा पुष्पक्षेपणकरना)

अर्थ-हमारी सदाकाल श्रुतज्ञान में भक्ति रहै ॥ श्रुतज्ञान में भक्ति रहै॥ श्रुतज्ञान में भक्ति रहै ॥ जिससे सम्यक्ज्ञान की प्राप्ति हो जो संसार का नाश करने वाला और मोक्षका कारण है ॥

गुरौभक्तिर्गुरौभक्तिर्गुरौभक्तिः सदास्तुमे ।
चारित्रमेवसंसारवारणं मोक्षकारणम् ॥

(यहा पुष्प क्षेपण करना)

अर्थ-हमारी सदाकाल श्रीगुरुमें भक्ति रहै श्रीगुरु में भक्तिरहै, श्रीगुरु में भक्तिरहै॥ जिससे सम्यक् चारित्र की प्राप्ति हो जो संसारका नाश करने वाला और मोक्षका कारण है ॥

देवजयमाल।

वत्ताणुट्ठाणेजणधणुदाणेपइपोसिउतुहुखत्तधरु ।
तुहुचरणविहाणेकेवलणाणे तुहुपरमप्पउपरमपरु॥

अर्थ-हे ऋषभ जिनेन्द्र इस भरतक्षेत्र में कल्पवृक्षों के नष्ट होनेपर सकल प्रजा उपायरहित रह गई तब आपने षट्कर्म रूप उपाय का उपदेश देकर और मनुष्यों को धन आदिक का दान देकर सहायता की इसकारण आप सत्यार्थ क्षत्री धर्मके धारक हुये और तपश्चरण अंगीकार करके केवल ज्ञान को प्राप्त होकर परमात्मस्वरूप उत्कृष्ट से भी उत्कृष्ट हुए ॥

जयरिसहरिसीसरणमियपाय । जयअजियजियंगमरोसराय ।
जयसंभवसंभवकयविओय । जयअहिणंदणणंदियपओय ॥

अर्थ-जिनके चरणों को ऋषीश्वर नमस्कार करते हैं ऐसे श्रीऋषभदेव जयवन्त रहो ॥ जीता है काम और राग तथा द्वेष जिसने ऐसे श्रीअजितनाथ जयवन्त रहो ॥ जिसने संसार मे उत्पन्न होने के कारण को दूर करादिया है

ऐसे संभवनाथ जयवंत रहो ॥ जिसने दर्शन और ज्ञान को बढाया है अर्थात् केवल दर्शन और केवल ज्ञान प्राप्त किया है ऐसे अभिनन्दन भगवान् जयवन्त रहो ॥

जयसुमइसुमइसम्मइपयास । जयपउमप्पहपउमाणिवास ॥
जयजयाहिसुपाससुपासगत्त । जयचंदप्पह चंदाहवत्त ॥

अर्थ-सुन्दर ज्ञानकेधारी और सत्यार्थमत के प्रकाशक श्रीसुमतिनाथ जयवन्त रहो ॥ पद्म अर्थात् लाल कमल के समान है प्रभा (दीप्ति) जिनकी और मोक्ष लक्ष्मी के स्थानक ऐसे श्रीपद्मप्रभु जयवन्त रहो ॥ दृढवन्धन में बंधे हुवे संसार के जीवोंकी रक्षा करनेवाले श्रीसुपार्श्वनाथ जयवन्त रहो ॥ श्रीचन्द्रप्रभु जयवन्त रहो चन्द्रमा समान है प्रभा जिनकी ॥

जय पुप्फदंतदंततरंग । जयसीयलसीयलवयणभंग ॥
जयसेयसेयकिरणोहसुज्ज जयवासुपुज्जपुज्जाणपुज्ज ॥

अर्थ-उपशांत कियाहै मनको जिसने ऐसे श्रीपुष्पदन्त जयवन्त रहो ॥ शीतल हैं वचन के तरंग जिनके ऐसे शीतलनाथ जयवन्त रहो ॥ कल्याणरूप किरणो के समूह के सूरज श्रीश्रेयांसनाथ जयवन्त रहो ॥ पूज्य पुरुषों से पूज्य श्रीवासुपूज्य भगवान् जयवंत रहो ॥

जयविमलविमलगुणसेढिठाण । जयजयाहिअणंताणंतणाण ।
जय धम्मधम्मतित्थयरसंत । जयसांतिसांतिविहियायवत्त॥

अर्थ-निर्मल गुणों की श्रेणी के स्थान अर्थात् निर्मलगुण प्राप्ति होने के कारण श्रीविमलनाथ जयवन्त रहो ॥ अनन्तज्ञान के धारी श्रीअनन्तनाथ जयवन्त रहो ॥ धर्मतीर्थ के प्रकट करने वाले श्रीधर्मनाथ जयवन्त रहो ॥ कल्याण विधानकी विधिही है छत्र जिन का ऐसे श्रीशांतिनाथ जयवन्त रहो ॥

जयकुंथुकुंथुपहुअंगि सदय । जयअरअरमाहरविहिय समय ॥
जय मल्लिमल्लिआदामगंध । जयमुणिसुव्वयसुव्वयाणि बंध ॥

अर्थ-कुंथुआदिक जीवोंपर दया करनेवाले श्रीकुंथुनाथ जयवन्त रहो॥अंतरंगबहिरंग लक्ष्मी को धारण करनेवाला रचाहै समय जिन्होंने ऐसे श्रीअरनाथ जयवन्त रहो ॥ मालती के फूलों की माला के समान जगत्को आनंद करने वाला है यशसुगंध जिसका ऐसे श्रीमल्लिनाथ जयवन्त रहो ॥ भव्यजीवों को निर्दोषव्रत धारण कराने के कारण ऐसे श्रीमुनिसुव्रतनाथ जयवन्त रहो ॥

जयणमिणामियामराणियरसामि । जयणेमिधम्मरहचक्कणेमि ॥
जयपासपास छिंदण किवाण । जयबड्ढमाणजसबड्ढमाण ॥

अर्थ-नमस्कार करता है देवों का इंद्र जिनके ऐसे श्रीनामिनाथ जयवन्त रहो ॥ धर्मरूप रथ के चक्रकी धुरी के समान श्रीनेमिनाथ जयवन्त रहो ॥ कर्मरूपी फांसी को काटने के लिये खड्गके समान श्रीपार्श्वनाथ स्वामी जयवंत रहैं ॥ बढ़ने हुवे यशके धारक श्रीवर्द्धमांन स्वामी जयवंत रहैं ।

इह जाणिय णामहिं,दुरियाविरामहिं,परहिंवि णमिय सुरावलिहिं
अणहणहिं अणाइहिं,सामियकुवाइहिं, पणविविअरहंतावलिहिं

अर्थ-इन वृषभादि नामों को जानकर, पापके नाश करने वाली, उत्कृष्ट देवों के समूहकरके नमस्कार की गई, आदि और अन्तरहित,कुवादियों को शांत करने वाली और उत्कृष्ट ऐसी अरहंतावली को नमस्कार करताहूं-

ओं ह्रीं ऋषभादि वर्द्धमानपर्यंततीर्थंकरेभ्योअर्घंनिर्वपामीतिस्वाहा

अर्थ-श्रीऋषभनाथसे लेकर श्रीवर्द्धमान स्वामी तक २४ तीर्थंकरों को अर्घ चढ़ाताहूं ॥

शास्त्रजयमाल ॥

संपइसुहकारणकम्म वियारण भवसमुद्दतारणतरणं ।
जिणवाणिणमस्सामिसत्तिपयासमिसुग्गमोक्खसंगमकरणं ॥

अर्थ-हे जिनवाणी इसकाल में सुखकी देनेवाली कर्मोंका नाश करने वाली भवसमुद्र से तारनेको जहाज समान स्वर्ग मोक्षमें पहुंचानेवाली मैं तुझे नमस्कार करताहूं ॥ और तेरे आराधनमें अपनी शक्ति प्रकट करताहूं

जिणिंदमुहाउविणिग्गयतार गणिंदविगुंफियगंथपयार ।
तिलोयहमण्डणधम्महखाणि सयापणमामिजिणिंदहवाणि ॥

अर्थ-जिसका अर्थ श्रीजिनेन्द्र के मुखसे प्रकट हुवाहै और गणधरने जिस का ग्रन्थरूप रचना कियाहै जो तीनलोक का मण्डण और धर्मकी खान है ऐसी जिनवाणीको मैं सदा नमस्कार करताहूं ॥

अवग्गहईहअवायजुएहि सुधारणभेयहितिण्णिसएहि ।
मईछत्तीसबहुप्पमहाणि सयापणमामिजिणिन्दहवाणि ॥

अर्थ-अवग्रह ईहा अवाय धारणा भेद से और बहु बहु विधि आदिके

भेदसे जिसमें तीनसौ छत्तीस ३३६ भेद मति ज्ञान के वर्णन कियेहैं उस जिनवाणीको मैं सदा नमस्कार करताहूं ॥

सुदंपुणदोणिअनेयपयार सुबारहभेयजगत्तयसार ।
सुरिंदणरिंदसमाच्चेओजाणि सयापणमामिजिणिदहवाणि ॥

अर्थ-श्रुत ज्ञान तीन जगत् में सारहै ॥ अंग और अंगवाह्य से इस श्रुतज्ञान के दो भेदहैं और आचारांग आदिक वारह भेदहैं और अंगोंका भेद करने से अनेक भेदहैं ॥ सुरेंद्र नरेंद्र आदिक जिसकी पूजा करतेहैं ऐसी जिनवाणीको मैं सदाकाल नमस्कार करताहूं ॥

जिणिंदगणिंदणरिंदहऋद्धि पयासइपुएणपुराकिउलद्धि ।
णिउग्गुपहिल्लुउएहुबियाणि सयापणमामिजिणंदहवाणि ॥

अर्थ-जिसमें तीर्थकर गणधर और चक्रवर्ती आदिककी ऋद्धिका और तीर्थंकर आदिक होनेसे पहले जन्ममें उपार्जनकी हुई लब्धि का प्रकाशकरने वाला प्रथमानु योग है उस जिनवाणीको मैं सदा नमस्कार करता हूं ॥

जुलोयअलोयहजुत्तिजणेइ जुतिएणाविकालसरूवभणेइ ।
चउग्गइलक्खणदुज्जउजाणिसयापणमामिजिणंदहवाणि ॥

अर्थ-जो लोक अलोक की योग्यता प्रकट करै और तीनकाल का स्वरूप वर्णन करे और चारों गति का लक्षण कहै ऐसा करणानुयोग जिसमें है मैं उस जिनवाणीको सदा काल नमस्कार करता हूं ॥

जिणिंदचरित्तुविचित्तुमुणेइ सुसावयधम्महजुत्तिजणेइ ।
निउग्गुवितिज्जउइत्थुबियाणि सयापणमामिजिणंदहवाणि ॥

अर्थ-जिस से मुनिका विचित्र आचरण मालूमहो जिससे श्रवणधर्म की योग्यता प्रकट हो ऐसा तीसरा चरणाणुयोग जिसमें है उस जिनवाणी कोमैं नमस्कार करता हूं ॥

सुजीव अजीवह तच्चह चक्खु सुपुण्णाविपाव बिबंध बिमुक्खु ।
चउत्थु णिउग्गु विभासिय णाणि सयापणमामिजिणिंदहवाणि॥

अर्थ-जीव अजीव पुण्यपाप बंध मोक्ष आदिके स्वरूप को प्रकटपनेवताने वाला द्रव्यानुयोग का जिसमें वर्णन है ऐसी जिनवाणी को मैं सदाकाल नमस्कार करता हूं ॥

तिभेयहिओहिविणाणविचित्तु चउत्थुरिजोविउलंमइउत्तु ।
सुखाइयकेवलणाणविहाणि सयापणमामिजिणंदहवाणि ॥

अर्थ–तीन भेद और अनेक भेद रूप अवधिज्ञान और ऋजुमति और विपुल मति जिसके दो भेदहै ऐसा मनः पर्य्यज्ञान और क्षायिक केवलज्ञान का जिसमें वर्णन है ऐसी जिनवाणी को मैं सदा नमस्कार करताहूं ॥

जिणिंदहणाणजगत्तयभाणु महातमणासियसुक्खणिहाणु ।
पयच्चउभत्तिभरेणवियाणि सयापणमामिजिणिंदहवाणि ॥

अर्थ–जिनेन्द्रका ज्ञान तीन जगत्के पदार्थों के प्रकाश करने के अर्थ सूर्य के समान है, अज्ञान अन्धकारको नाश करनेवाला और सुखका निधान है ऐसा जानकर मैं सदाकाल उस सम्यक् ज्ञान को भक्तिपूर्वक हृदय में धारण करके जिनवाणी को नमस्कार करूं हूं ॥

पयाणिसुवारहकोडिसयेण सुलक्खतिरासियजुत्तिभरेण ।
सहस्सअठावणपंचवियाणि सयापणमामिजिणिंदहवाणि ॥

अर्थ–इस सकल द्वादशांग रूप श्रुतज्ञानके एकसौ वारहकोडि तिरासीलाख अठावन हजार पांच पद हैं ऐसा जानकर मैं सदाकाल जिनवाणी को नमस्कार करताहूं ॥

इकावणकोडिउलक्खलअठेव सहसचुलसीदिसयाछक्कवे ।
सढाइगवीसहगंथपयाणि सयापणमामिजिणिंदहवाणि ॥

अर्थ–इससमस्त श्रुतिज्ञानको वत्तीस अक्षरके श्लोकसे प्रमाण करनेसे इक्यावनकोडि आठलाख चौरासी हजार छै सो इक्कीस श्लोक प्रमाण उस जिनवाणीको मैं सदा नमस्कार करताहूं ॥

घत्ताछन्द ।

इयजिणवरवाणिविशुद्धमई जोभावियणाणियमणधरई ।
सोसुरणरिंदसंपइलहिवि केवलणाणविउत्तरई ॥

अर्थ–ऐसी जिनेंद्रकी वाणी को जो निर्मलवुद्धि भव्यपुरुष अपने मनमें धारणकरै वह सुरेन्द्र और नरेन्द्र की सम्पदा प्राप्तकरताहै और फिर केवल ज्ञानपाकर संसारसेपारउतरताहै ॥

ॐह्रीं श्रीसरस्वतीवाग्वादिनीद्वादशांगश्रुतज्ञानेभ्योनमः(१) आचारांग (२) सूत्रकृतांग (३) स्थानांग (४) समवायांग (५) व्याख्याप्रज्ञप्त्यंग (६) ज्ञातृधर्मकथांग (७) उपासकाध्ययनांग(८) अन्तकृद्दशांग (९) अनुत्तरोपपादकदशांग (१०) प्रश्नव्याकरणांग (११) विपाकसूत्रांग (१२) दृष्टिवादांग नामधेयद्वादशांगश्रुतज्ञानेभ्योअर्घनिर्विपामीतिस्वाहा ॥

अर्थ–श्रीजिनवाणी के वारह अंगोंको मैं अर्घ चढ़ाता हूं ॥

गुरुजयमाल ।

घत्ताछन्द ।

भवियहभवतारणसोलहकारण अज्जवितित्थियरत्तणहं ।
तवकम्मअसंगइदयधम्मंगइ पालविपंचमहाव्वयहं ॥

अर्थ–जो भव्य पुरुषोंको संसार से पार उतारनेवाली सोलहकारण भावनाको उपार्जन कर के तीर्थंकरपदके अर्थ तपकरते हैं और कर्म्मों के नाश करने वाले और दया धर्मके अंग पंच महाव्रतोंको पालतेहैं ॥

प्राकृत छन्द ।

बंदामिमहारिसिसीलवंत । पंचेंद्रियसंयमजोगजुत्त
जेग्यारहअंगहअणुसरंति । जेचौदहपुव्बहमुणिथुणंति ॥

अर्थ–जो शीलवन्तहैं पांचों इन्द्रियों को जिन्होंने वश कियाहै ॥ ग्यारह अंगका पाठ जिनको माप्तहोगयाहै जो चौदह पूर्वको जानकर स्तुति करतेहैं ऐसे महामुनिको मैं वंदना करताहूं ॥

पादाणुसारिबरकुट्ठबुद्धि । उपणगजाहआयासरिद्धि ।
जेपाणाहारी तोरणीय । जेरुक्खमूलआतावणीय ॥

अर्थ–जिनके पादानुसारी और श्रेष्ठ कोष्ट बुद्धि और आकाशगामिनी आदिक ऋद्धि उपजी हैं जो हाथकी अंजुली में रक्खाहुआ आहार लेतेहैं ॥ जो वरसात में वृक्ष के नीचे गर्मीमें पहाड़के ऊपर तप करतेहैं ॥

जे मोणिधाय चंदाहणीय। जेजत्थथवणाणिवासणीय ।
जे पंचमहव्बयधरणधीर । जे समितगुत्तिपालणहवीर ॥

अर्थ—जो मौन धारणकर चन्द्रमाकी समान कमनी वदनी आहार करते हैं ॥ जो इधर उधर वनमें निवास करतेहैं ॥ जो पांच महाव्रत धारणकरने में धीर है और समिति गुप्ति के पालनेमें बड़े वीर हैं ॥

जेवड्ढहिदेह बिरत्तचित्त । जेरायरोसभय मोह चित्त ।
जेकुगइहिसंवरुविगयलोह । जेदुरियविणासणकामकोह ॥

अर्थ-जो देह में विरक्तचित्त वर्त्तै हैं ॥ जो रागद्वेष भय और मोहसेरहित हैं ॥ जो कुगति को रोकनेवाले हैं जो लोभ रहित हैं जोपापरहित है जो पाप और काम क्रोधके नाश करने वालेहैं ॥

जेजल्लमल्लतिणलित्तगत्त । आरंभपरिगहजेविरत्त ।
जेतिणगकालबाहिरगमंति । छट्ठठमदसमउतउचरंति ॥

अर्थ—जिनके शरीरपर मैल पसेव और तिनके लिपटे हुएहै ॥ जो आरंभपरिग्रहरहित है॥जो तीनकाल अर्थात् सदा वस्तीसे बाहर ही रहते हैं जो छह आठ दश दिन आदि का उपवास धारण कर तप करते हैं ॥

जेइक्कगासदुइगासलिंति । जेणीरसभोयणरइकरंति ।
तेमुणिवरबंदउठियमसाण । जेकम्मडहइवरसुक्कभाणि ॥

अर्थ—जो एक वा दो ग्रास आहार लेते हैं जो नीरस भोजन करैं हैं जो मसानभूमि में तिष्ठ कर धर्म ध्यान और शुक्लध्यान के द्वाराकर्मों को दग्धकरैंहै ॥ ऐसे मुनीश्वर को मैं वंदना करताहूं ॥

बारहविहसंजमजेधरंति । जेचारिउविकहापरिहरंति ।
बावीसपरीसहजेसहंति । संसारमहाणउतेतरंति ॥

अर्थ—जो बारह प्रकार संयम धारण करैं हैं ॥ जो चार प्रकारकी विकथा को दूर करैं हैं जो बाईस प्रकार परीसह सहै है ॥ वह संसार रूप महा कूप से तिरैं हैं ॥

जेधम्मवुद्धिमहियलथुणंति । जेकाउसग्गोणिसगमंति ।
जेसिद्धविलासणिअहिलसंति । जेपक्खमासआहारालिंति ॥

अर्थ—जिनकीधर्मवुद्धि की इस पृथ्वीपर स्तुति होती है॥ जो कायोत्सर्ग में रात्रि व्यतीति करैं है ॥ जो सिद्ध पदकी अभिलाषा करैं हैं जो पक्ष वा महीने मे आहार लेते हैं ॥

यक और यतीन्द्र अर्थात् आचार्य उपाध्याय और सामान्य तपस्वी और देश की, राज्यकी, नगरकी, और राजाकी शांति करो ॥

क्षेमंसर्वप्रजानांप्रभवतुवलवान् धार्मिकोभूमिपालः ।
कालेकालेचसम्यक्वर्षतुमघवा व्याधयोयान्तुनाशम् ॥
दुर्भिक्षंचौरमारीक्षणमपिजगतां मास्मभूज्जीवलोके ।
जैनेंद्रंधर्मचक्रंप्रभवतुसततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥

अर्थ—समस्त प्रजाके क्षेमकुशल होवै और भूमिपाल अर्थात् राजा वलवान् और धर्मात्मा होवै और समय पर यथेच्छमेघ वर्से और व्याधियों का नाशहो दुर्भिक्ष चोर मरी जगत् में कदाचित् न होवैं और समस्त जीवोंको सुख देने वाला जिनेन्द्र भगवान् का धर्म चक्र सदा अखण्ड प्रवर्तें ।

प्रध्वस्तघातिकर्माणः । केवलज्ञान भास्कराः ।
कुर्वंतुजगतः शान्तिं । वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥

अर्थ विध्वन्सकिये है घातिया कर्म जिन्होंने और केवल ज्ञानकर दैदीप्यमान् हैं ऐसे श्रीवृषभादि जिनेश्वर जगत् में शांति करो ॥

इष्टप्रार्थना ।

प्रथमंकरणंचरणं द्रव्यंनमः

अर्थ—प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यानुयोग को नमस्कार करता हूं ॥

शास्त्राभ्यासोजिनपतिनुतिःसंगतिःसर्वदार्य्यैः ।
सद्वृत्तानांगुणगणकथादोषवादेचमौनम् ॥
सर्वस्यापिप्रियहितवचोभावनाचात्मतत्वे ।
संपद्यंतांममभवभवेयावदेतेपवर्गः ॥

अर्थ—जबतक मुझको मोक्ष न होवे तबतक मुझ को यह सामग्री प्राप्त रहै अर्थात् शास्त्र का अभ्यासरहै जिनेन्द्रभगवान्की स्तुति करतारहूं सदाकाल सत्पुरुषों की संगत रहै और सत्य आचरणकेधारी पुरुषों के गुणोंकी कथा मेरी जबान पररहै किसीका दोप कहने के वास्ते मेरा मुंह बंद रहै मेरा

वचन ऐसारहे जो सर्व प्राणियों के हित रूप और प्रियहो और आत्मतत्व की भावना मुझमें रहे ॥

तवपादौममहृदयेममहृदयं तवपदद्वयेलीनम् ।
तिष्ठतुजिनेंद्रतावत् । यावत्निर्वाणसंप्राप्तिः ॥

अर्थ—हे भगवान् जबतक मुझको मोक्ष न मिलै तबतक आपके चरण मेरे हृदयमें वसे रहे और मेरा हृदय आपके दोनो चरणों में लीनरहै ॥

अक्खरपयत्थहीणंमत्ताहीणंचजंमयेभाणियं ।
तंखमउणाणदेवयमज्झविदुक्खक्खयंदिंतु ॥

अर्थ—हे ज्ञानरूपदेव मैंने अक्षरहीण और मात्राहीण जो कुछ कहा हो उसकी वावत मुझपर क्षमाकरो और मेरे संसारके दुःखो को क्षयकरो ॥

दुक्खखओकम्मखओसमायमरणंचवोहिलहोय ।
ममहेउजगतवंधव जिणवरतवचरणसरणेण ॥

अर्थ—हे जगतके बांधव तुम्हारे चरणों के शरणके प्रतापसे मेरे संसारिक दुःखों का क्षय होवे कर्मों का क्षय होवे और समाधि मरण होवे और रत्नत्रय वोधका लाभ होवे ॥

विसर्जन ।

ज्ञानतोज्ञानतोवापिशास्त्रोक्तंनकृतंमया ।
तत्सर्वंपूर्णमेवास्तुत्वत्प्रसादाजिनेश्वर ॥

अर्थ—इस पूजन करने में ज्ञानसे वा अज्ञानता से शास्त्रोक्त जो कुछ नहीं कियागया हो हे जिनेन्द्र ! आपके प्रसाद से वह समस्त पूर्णताको प्राप्त होवे ॥

आह्वानंनैवजानामि नैवजानामिपूजनं ।
विसर्जनंनैवजानामि क्षमस्वपरमेश्वर ॥

अर्थ—हे परमेश्वर मैं अव्हानन नहीं जानता हूं पूजन नहीं जानता हूं विसर्जन नहीं जानता हूं मुझपर क्षमा करो ॥

आहुतायेपुरादेवा लब्धभावायथाक्रमम् ।
तेमयाभ्यर्चिताभक्त्यासर्वेयांतुयथास्थितिम् ॥

अर्थ—जो देव मेरे पूर्वभावो के संकल्प से क्रम से अव्हाननकिये गये तिन को मैंने भक्तिकर पूजे अब समस्त यथा स्थान जावो ॥ ॥

॥ इति ॥

सर्वप्रकार के छपेहुवे जैनग्रन्थ छोटे और बड़े हमारे पास से मिलते हैं और बहुत ग्रन्थों की टीका सरलहिन्दी-भाषामें कराकर हम छपवा रहे हैं ।

सूरजभानु वकील
देवबन्द (सहारनपुर)